अष्टछाप कृष्णकाव्य में लोकतत्त्व

डॉ. विजय लक्ष्मी शर्मा

सहायक प्रोफेसर
हिंदी विभाग, सरकारी कॉलेज, धौलपुर (राजस्थान).

सार:
अष्टछाप कवियों की रचनाओं में लोक-आख्यानों, लोक-गीतों और ग्रामीण जीवन की छाप का विश्लेषण। इसके अतिरिक्त, आप 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' और 'दो सौ वैष्णवन की वार्ता' में वर्णित लोक-जीवन के तत्वों पर भी शोध कर सकते हैं, और अष्टछाप कवियों की भाषा में लोकभाषा और क्षेत्रीयता के प्रभाव की समीक्षा कर सकते हैं, यह स्रोत में उल्लिखित "चौरासी वैष्णवन की वार्ता" और "दो सौ वैष्णवन की वार्ता" का उल्लेख किया गया है। इस आलेख में हम अष्टछाप कृष्ण काव्य में लोककथाओं पर चर्चा करेंगे।

बीज शब्द:
अष्टछाप कृष्णकाव्य, लोकतत्त्व, रचनाओं, लोक-आख्यानों, लोक-जीवन, वैदिक युग, कृष्ण भक्ति, प्रेमतत्व निरूपण, भक्ति-प्रताप

परिचय:
अष्टछाप (हिंदी में जिसका अर्थ "आठ मुहरें" है) आठ भक्त कवियों के एक समूह को संदर्भित करने के लिए प्रयुक्त शब्द है, जो वल्लभाचार्य और उनके पुत्र विट्ठलनाथ के शिष्य थे। ये कवि हवेली संगीत प्रार्थना, स्तुति, कीर्तन और भगवान कृष्ण की विभिन्न लीलाओं का गायन करते थे, जो ध्रुपद धम्म, द्विपदी, त्रिपदी, चतुष्पदी, शतपदी और अष्टपदी प्रबंध में रचित थे।
इसकी स्थापना १५६५ ईस्वी में पुष्टिमार्ग की नींव के साथ हुई थी। कवि सूरदास इस समूह के सबसे प्रसिद्ध सदस्य थे, अन्य कवि थे: परमानंददास, नंददास, कृष्णदास, गोविंदस्वामी, कुंभनदास, छीतस्वामी और चतुर्भुजदास। अष्टछाप कीर्तनिया सूरदास जी के अलावा कुम्भनदास जी भी एक महान संगीतज्ञ थे।
कृष्णभक्ति काव्य परम्परा अति प्राचीन है। यह परम्परा वैदिक युग से लेकर आधुनिक युग तक विस्तारित है। भारत की अधिकांश भाषाओं में कृष्ण-कथा का व्यक्तित्व इतना व्यापक है कि सभी को अपने-अपने अनुसार कुछ न कुछ मिल ही जाते हैं। आज के वैश्वीकरण के युग कृष्णभक्ति काव्य का सामाजिक सरोकार पर चर्चा अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि कृष्ण भक्त कवियों में केवल भक्ति रस में डूबकर उनके माधुर्य रूप को ही नहीं चित्रित किया है बल्कि समाज के प्रति उनकी चिन्ता रही है। इमें उन पहलूओं की भी चर्चा करनी चाहिए ताकि उनका सर्वांगीण विमर्श संभव हो सके एवं समाज के प्रति उनके योगदान का आकलन किया जा सके।

हिन्दी कृष्ण भक्ति काव्य का मुख्य वण्य विषय श्रीकृष्ण का चरित्र अथवा उनकी लीलाए ँ हैं। ये लीलाएं दो प्रकार की है - लौकिक एवं अलौकिक। इसके अनुसार अनेक सम्प्रदाय भी हैं, परन्तु सभी सम्प्रदायों के कवि कृष्ण के माधुर्य रूप को ही अभिव्यक्त करते हैं। उनके लोकरक्षक एवं धर्म संस्थापक स्वरूप को अधिकांशतः महत्व नहीं दिया गया। इसके बावजूद कुछ ऐसे अंश मिल जाते हैं, जिससे कृष्ण काव्य का सामाजिक पक्ष उभरता है एवं उनके सामाजिक सरोकार भी स्पष्ट होते हैं। कोई भी रचनाकार वह किसी भी काल का क्यों न हो, समाज से अलग नहीं। कृष्ण भक्त भी इससे अलग सोच नहीं रखते किन्तु सभी सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक समस्याओं के समाधान के लिए कृष्ण कोही केन्द्र में रखते हैं। बल्लभाचार्य ने अपने 'कृष्णाश्रय' ग्रन्थ में कहा है कि गंगा आदि सब उत्तम तीर्थ भी दुष्टों से आक्रान्त हो रहे हैं। इसलिए उन आधि दैविक तीर्थों का महत्व भी तिरोहित हो गया है। ऐसे समय में कृष्ण ही मेरी गति है। अशिक्षा और अज्ञान के कारण मंत्र नष्ट हो रहे हैं। ब्रह्मचर्यादि व्रत से लोग रहित है। ऐसे लोगों के पास रहने से वेद-मंत्र अर्थहीन हो गए हैं। उनके अर्थ और ज्ञान भी विस्मृत हो गए हैं। ऐसी दशा में केवल कृष्ण ही मेरी गति है । "

अष्टछाप की मुख्य विशेषताओं में भगवान श्रीकृष्ण के लीला-वर्णन पर ध्यान केंद्रित करना, पुष्टिमार्ग का पालन करना और ब्रजभाषा का प्रयोग करना शामिल है। अष्टछाप आठ कवियों का एक समूह था, जिन्होंने भक्ति रस से भरपूर रचनाएँ कीं और कृष्ण की बाल और युवा लीलाओं का विशद चित्रण किया। इन कवियों को संगीतज्ञ और कलाकार के रूप में भी जाना जाता था, जो कीर्तन और गायन के माध्यम से अपनी भक्ति व्यक्त करते थे। [१]

वैदिक परम्परा से ही भागवत धर्म का उदय हुआ। इसी धर्म का विकसित रूप वैष्णव धर्म है। प्रसिद्ध ग्रन्थ महाभारत से पूर्व का साहित्य मानव-कृष्ण की बात करता है, महाभारत में श्रीकृष्ण अवतार रूप में स्वीकार कर लिए गए हैं। महाभारत में कृष्ण देवत्व की महिमा से मण्डित हैं। वे नारायण हैं। कृष्णकाव्यों में उनके एक रूप गोपाल की विस्तृत चर्चा मिलती है। भागवतपुराण में कृष्णचरित का विस्तृत वर्णन हुआ है। लौकिक साहित्य में श्रीकृष्ण का उल्लेख व्याकरण ग्रन्थों, चम्पू काव्यों और नाटकों से मिलने लगता है। भास, अश्वघोष और कालिदास की रचनाओं में श्रीकृष्ण का उल्लेख मिलता है। माघ के शिशुपाल वध में श्रीकृष्ण का विस्तृत वर्णन है। गीत गोविन्द की रचना जयदेव ने की है। कृष्णभक्ति काव्यधारा में गीत गोविन्द का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह भक्ति और शृंगार से समन्वित रचना है। इसके तीन मुख्य पात्र हैं - कृष्ण, राधा और राधा की सखी। अपभ्रंश साहित्य की महत्त्वपूर्ण रचना स्वयंभू कृत अरिष्टनेमचरिउ में श्रीकृष्ण का विस्तृत वर्णन मिलता है। इसी तरह आचार्य गुणभद्र लिखित उत्तरपुराण भी कृष्णभक्ति काव्यधारा में परिगणित किया जाने वाला प्रसिद्ध ग्रन्थ है। हेमचन्द्र के अनेक दोहों में श्रीकृष्ण का स्तुतिपरक चित्रण है। इनके कुछ दोहों में कृष्ण के लौकिक रूप का भी चित्रण है। इनके श्रीकृष्ण राधा के पयोधरों को देखकर नाच उठते हैं।

कृष्ण भक्ति काव्य की परम्परा पर विचार करते हुए भारतीय धर्म और दर्शन में कृष्ण के उल्लेख का स्रोत ढूँढना उतना आवश्यक नहीं है, पर संक्षेप में एक नजर डाल लेना कोई गैरमुनासिब भी नहीं होगा। बड़ी स्पष्टता से कहा जा सकता है कि ऋग्वेद में इनका प्राचीनतम उल्लेख मिलता है। छान्दोग्य उपनिषद, महाभारत के शान्तिपर्व में तो वासुदेव कृष्ण की चर्चा ईश के रूप में है ही; 'घत' और 'महाउमग्ग' जातकों में भी कण्ह वासुदेव की कथा है। हरिवंश, विष्णु, महाभारत, ब्रह्मवैवर्त आदि अनेक पुराणों में भी कृष्ण कथा का पर्याप्त उल्लेख है। सूचनानुसार मौखिक कथाओं में कृष्ण की कथा लोक-प्रचलन में खूब थी। पुराणों में कृष्ण का उल्लेख धीरे-धीरे धार्मिक रूपक की तरह होने लगा, जो क्रमशः कवियों की कल्पना में जीवन्त हो उठा। रचनात्मक कल्पना के लिए कृष्ण कथा पर्याप्त ऊर्वर क्षेत्र साबित हुआ।

कृष्णाख्यान पर आधारित कथाओं पर सरसरी तौर पर विचार करने से कृष्ण के तीन रूप हमारे समक्ष मौखिक और लिखित रूप में पेश होते हैं--पहला रूप है, योगी और धर्मात्मा का, जिसकी चरम परिणति गीता के कृष्ण के रूप में है। दूसरा रूप है ललित गोपाल का, जो संस्कृत में रचित ग्रन्थ महाभारत और पुराणों में, विविध प्रसंगों में वर्णित कथाओं में स्पष्ट है। तीसरा रूप वीर राजनयिक का है, जिसकी गौरवशाली प्रस्तुति महाभारत युद्ध के विविध प्रसंगों में, और पुराणों में हुई है। ज्ञान, राग, और कर्म जैसी मानसिक वृत्तियों के प्रतीक, ये तीनों रूप अत्यन्त प्राचीन हैं, और भिन्नता के बावजूद इन तीनों रूपों की एकसूत्रता कृष्ण के व्यक्तित्व में देखी जा सकती है। निस्संगता और तटस्थता यहाँ मुख्य वृत्ति के रूप स्पष्ट है। ये तीनों रूप कृष्ण के उस देव रूप का संकेत देते हैं, जिन्हें प्राचीन काल से इष्टदेव के रूप में लोकप्रियता मिली हुई है। [२]

ईसा पूर्व ६०० के आसपास, जब ब्राह्मण ग्रन्थों के हिंसा प्रधान यज्ञादि की प्रतिक्रिया में बौद्ध जैन सुधार आन्दोलन का बोलवाला था, उससे भी पहले एक उपासना प्रधान सम्प्रदाय विकसित हो रहा था, जो प्रारम्भ में वृष्णि वंशीय सात्वत जाति तक सीमित था। सौन्दर्य और माधुर्य उनके इष्ट देव रूप की मुख्य विशेषता थी और इसी रूप में वे सात्वत जाति के इष्ट थे। विकास के दौरान जब शूरसेन प्रदेश (आधुनिक ब्रज) में बसने वाली इस सात्वत जाति का स्थानान्तरण हुआ, तो दूसरी-तीसरी शताब्दी ईसापूर्व में यह उपासना मार्ग पश्चिम की ओर भी गया। इस उपासना मार्ग में कृष्ण की आराधना होती थी। जैनों के सलाक पुरुषों में कृष्ण, बलदेव की गिनती है। इस देव रूप के कारण पूजाभाव से उन्हें परमब्रह्म के रूप में स्वीकार किया गया। पर ललित और मधुर गोपाल के रूप में काव्य, मूर्तिकला, और शिलालेखों में इनकी कथाएँ प्रतीत होती रहीं। ध्यातव्य है कि पुराणों में इन कथाओं का उल्लेख उस रूप में नहीं हुआ। प्राचीन पुराणों में केवल भागवत पुराण ऐसा है जहाँ गोपाल कृष्ण की कथा का वर्णन है, पर उसमें भी राधा की चर्चा कहीं नहीं है। पर ि◌ंपुराण और ब्रह्मवैवर्त पुराण में राधा-कृष्ण के प्रेम की कथा की चर्चा विस्तार से है। मध्यकाल में देसिल बयना में रचे गए काव्य में इस प्रसंग का उल्लेख देखकर यह अनुमान करना सहज है कि लोक-जीवन में कहानियों और गीतों के रूप में इसकी पर्याप्त लोकप्रियता रही होगी।

कृष्ण-काव्य-धारा की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं -

१. श्रीकृष्ण-साहित्य का मुख्य विषय कृष्ण की लीलाओं का गान करना है। वल्लभाचार्य के सिद्धांतो से प्रभावित होकर इस शाखा के कवियों ने कृष्ण की बाल-लीलाओं का ही अधिक वर्ण किया है। सूरदास इसमें प्रमुख है।

२. इस शाखा में वात्सल्य एवं माधुर्य भाव का ही प्राधान्य है। वात्सल्य भाव के अंतर्गत कृष्ण की बाल-लीलाओं, चेष्टाओं तथा माँ यशोदा के हृदय की झाँकी मिलती है। माधुर्य भाव के अंतर्गत गोपी-लीला मुख्य है। सूरदास के बारे में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है- वात्सल्य के क्षेत्र में जितना अधिक उद्घाटन सूर ने अपनी बंद आँखों से किया, इतना किसी ओर कवि ने नहीं। इन क्षेत्रों का तो वे कोना-कोना झाँक आये।

३. इस धारा के कवियों ने भगवान कृष्ण की उपासना माधुर्य एवं सख्य भाव से की है। इसीलिए इसमें मर्यादा का चित्रण नहीं मिलता।

४. श्रीकृष्ण काव्य में मुक्त रचनाएँ ही अधिक पाई जाती हैं। काव्य-रचना के अधिकांशतः उन्होंने पद ही चुने हैं।

५. इस काव्य में गीति-काव्य की मनोहारिणी छटा है। इसका कारण है- कृष्ण-काय की संगीतात्मक्ता। कृष्ण-काव्य में राग-रागिनियों का सुंदर उपयोग हुआ है

६. श्रीकृष्ण काव्य में विषय की एकता होने के कारण भावों में अधिकतर एकरूपता पाई जाती है।
७. श्रीकृष्ण को भगवान मानकर पदों की विनयावली द्वारा पूजा जाने के कारण इसमें भावुकता की तीव्रता अधिक पाई जाती है।
८. इस काव्य-धारा में उपमा, रूपक तथा उत्प्रेक्षा अलंकारों का प्रयोग किया गया है।
९. कृष्ण-काव्य-धारा की भाषा ब्रज है। ब्रजभाषा की कोमलकांत पदावली का प्रयोग इसमें हुआ है। यह मधुर और सरस है।
१०. इस काव्य में रसमयी उक्तियों के लिए तथा साकार ईश्वर के प्रतिपादन के लिए भ्रमरगीत लिखने की परंपरा प्राप्त होती है।
११. श्रीकृष्ण-काव्य स्वतंत्र प्रेम-प्रधान काव्य है। इन्होंने प्रेमलक्षणा भक्ति को अपनाया है। इसलिए इसमें मर्यादा की अवहेलना की गई है।
१२. कृष्ण-काव्य व्यंग्यात्मक है। इसमें उपालंभ की प्रधानता है। सूर का भ्रमरगीत इसका सुंदर उदाहरण है।
१३. श्रीकृष्ण काव्य में लोक-जीवन के प्रति उपेक्षा की भावना पाई जाती है। इसका मुख्य कारण है- कृष्ण के लोकरंजक रूप की प्रधानता।
१४. श्री कृष्ण-काव्य-धारा में ज्ञान और कर्म के स्थान पर भक्ति को प्रधानता दी गई है। इसमें आत्म-चिंतन की अपेक्षा आत्म-समर्पण का महत्व है।
कृष्ण-भक्ति काव्य के आरम्भ की पृष्ठभूमि, उसके विकास की रूपरेखा, और उसके महत्त्व को रेखांकित करते हुए बड़ी स्पष्टता से यह तथ्य सामने आता है कि कृष्ण-भक्ति के लोक रंजनकारी काव्य ने भारतीय मानस में आनन्द की लहर पैदा की। सरलता, सहजता, वाक्य चातुर्य और वाद्विद्ग्धता से युक्त भक्ति और लीला का यह काव्य आज भी प्रासंगिक है। वात्सल्य, बाल-लीला, माधुर्य, कान्त, दास्य, सख्य आदि भावों की भक्ति और लीला का चित्रण इस काव्य को खास बनाता है। काव्य की इस परम्परा में सबसे मार्मिक, संवेदनशील और सर्जनात्मक कविता सूरदास की है। कृष्ण विषयक भावों से परिपूर्ण सूर ने अपनी पूर्ववर्ती काव्य-परम्परा का अनुसरण किया और फिर अपनी काव्य-प्रतिभा एवं भक्ति से ऐसा काव्य-संसार रचा कि बाद की कृष्ण-भक्ति कविता पर इसकी अमिट छाप पड़ी। रामचन्द्र शुक्ल ने तो यहाँ तक लिख दिया कि वात्सल्य और बाल-लीला का काव्य-सृजन जो सूर के बाद हुआ, वह सूर के काव्य का जूठन ही है। इस पाठ में सूरदास के इसी काव्य-वैशिष्ट्य का उद्घाटन किया जाएगा। [३]

कृष्ण-भक्ति काव्य की पृष्ठभूमि और विकास

भारत में कृष्ण-काव्य की परम्परा के शुरुआत की कोई निश्चित जानकारी नहीं है। मध्ययुग के भक्ति-आन्दोलन से कृष्ण-भक्ति काव्य का विधिवत विकास हुआ, लेकिन इसकी पृष्ठभूमि उससे पूर्व की है, जहाँ से इस काव्य को आधार मिलता है। कृष्ण-भक्ति धारा का विकास सम्पूर्ण भारत में हुआ। भक्ति-आन्दोलन में भक्ति-काव्य की यह धारा दक्षिण से आरम्भ होकर उत्तर और फिर पूर्व एवं पश्चिम तक फैल गई। वर्तमान समय में कृष्ण भक्ति के विस्तार और प्रसिद्धि का प्रमाण यही है कि भारत ही नहीं, विश्व के कई देशो में इस काव्य-परम्परा के साहित्य को बड़े चाव से पढ़ा और सुना जाता है। कृष्ण अब भारत ही नहीं, विश्व भर के साहित्य के प्रमुख नायक हैं, जिनको केन्द्रित कर विश्व की विविध भाषाओं में काव्य-सृजन हुआ है। [४]

साहित्य की समीक्षा:

अष्टछाप कवि: श्री बल्लभाचार्य ने जिस पुष्टिमार्गीय भक्ति सम्प्रदाय की स्थापना की थी उसका जिन भक्त कवियों द्वारा पल्लवन किया गया, उन्हें अष्टछाप के कवि कहा जाता है | पुष्टिमार्ग को स्वीकार करने वाले अनेक भक्त उस समय विद्यमान थे किन्तु जिन आठ भक्त कवियों पर गोस्वामी बिट्ठल नाथ ने अपने आशीर्वाद की छाप लगाई थी वे अष्टसखा या अष्टछाप के नाम से प्रसिद्ध है। इन आठ में से बल्लभाचार्य के चार शिष्य थे कुभनदास, सूरदास, परमानन्द दास और कृष्ण दास । बाकी चार गोस्वामी बिट्ठलनाथ के शिष्य थे- गोविन्दस्वामी, नंन्ददास, छींतस्वामी और चतुभुर्जदास। इन अष्टछाप के कवियों को बल्लभ संप्रदाय में कृष्ण का अष्टसखा भी कहा जाता है। लीलामय भगवान कृष्ण के प्रति भक्ति के आवेश में इन कवियों के हृदय से गीत काव्य की जो धारा फूटी वह भक्तों के साथ की काव्य रसिकों के हृदय को रसमग्न करने की पूर्ण क्षमता रखती है। [५]

सूरदास: अष्टछाप कवियों ने सूरदास का स्थान सर्वोपरि है। सूरदास का समय १४८३ से १५६३ ई० के बीच बताया गया है। सूर साहित्य के अन्तः साक्ष्य तथा समकालीन प्ररवर्ती रचनाओं के बहि साक्ष्य के आधार पर सूर के शोधकर्ता विद्वान इस निष्कर्ष पर पहुंचे है कि सं० १५३५ की बैशाख शुक्त को इनका जन्म हुआ कई विद्वावनों ने इनका जन्म काल १४७८ ई० पर स्थिर कियां है । इनका जन्म स्थान बल्लभगढ़ फरीदाबाद के निकटवर्ती सींही नामक गांव माना जाता है। ऐसा माना जाता है कि ये नेत्रविहिन थे किन्तु उनके जन्मांध होने पर विवाद है। ४० वर्ष की अवस्था में ये बल्लभाचार्य के शिष्य बने इसके बाद ये चन्द्रसरोवर के समीप पारसोली गांव में रहने लगे थे जहां पर १५८३ ई० में उनका देहावसान हुआ । बिट्ठलनाथ ने शोकाकुल होकर कहा था, "पुष्टिमारग को जहाज जात है, सो जाको कछु लेना होय सो लेऊ । [६]

उद्देश्य:

- कृष्ण-काव्य-धारा की प्रमुख विशेषताएँ
- अष्टछाप कृष्णकाव्य में लोकतत्त्व
- कृष्ण-भक्ति काव्य की पृष्ठभूमि और विकास

अनुसंधान क्रियाविधि:

यह अध्ययन अन्वेषणात्मक प्रकृति का है। इस शोध पत्र को तैयार करने में प्रयुक्त आँकड़े द्वितीयक प्रकृति के हैं, जिन्हें विभिन्न प्रकाशित स्रोतों से एकत्र किया गया है। इस शोध पत्र को तैयार करने के लिए प्राप्त आँकड़े विभिन्न प्रतिष्ठित पत्रिकाओं और प्रासंगिक वेबसाइटों से लिए गए हैं।

परिणाम और चर्चा:

अष्टछाप पर टिप्पणी अष्टछाप पर टिप्पणी लिखिए हिन्दी साहित्य में कृष्ण भक्ति काव्य को प्रेरणा देने का बहुत कुछ श्रेय श्री वल्लभाचार्य (१४७८ ई.-१५३० ई.) को है, जो कि पुष्टिमार्ग के संस्थापक एवं प्रवर्तक थे। इनके द्वारा प्रवर्तित पुष्टिमार्ग में दीक्षित होकर सूरदास आदि आठ कवियों की मंडली ने अत्यन्त महत्वपूर्ण साहित्य की रचना की। गोस्वामी बिट्ठलनाथ ने सं.१६०२ के लगभग अपने पिता वल्लभ के ८४ शिष्यों में से चार और अपने २५२ शिष्यों में चार को लेकर अष्टछाप के प्रसिद्ध भक्त कवियों की मंडली की स्थापना की। [७]

चित्र १: अष्टछाप

अष्टछाप के भक्त कवियों में सबसे ज्येष्ठ कुम्भनदास थे और सबसे कनिष्ठ नंददास थे। काव्यसौष्ठव की दृष्टि से सर्वप्रथम स्थान सूरदास का है तथा द्वितीय स्थान नंददास का है। सूरदास पुष्टिमार्ग के जहाज कहे जाते है। ये वात्सल्य रस एवं श्रृंगार रस के अप्रतिम चितेरे माने जाते है। इनकी महत्वपूर्ण रचना सूरसागर मानी जाती है। नंददास काव्य सौष्ठव एवं भाषा की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इनकी महत्वपूर्ण रचनाओ में "रासपंचाध्यायी","भवरगीत" एवं "सिन्धांतपंचाध्यायी" है। परमानंददास के पदों का संग्रह "परमानन्द-सागर" है । कृष्णदास की रचनायें "भ्रमरगीत" एवं "प्रेमतत्व निरूपण" है। कुम्भनदास के केवल फुटकर पद पाये जाते है। इनका कोई ग्रन्थ नही है । छीतस्वामी एवं गोविंदस्वामी का कोई ग्रन्थ नही मिलता । चतुर्भुजदास की भाषा प्रांजलता महत्वपूर्ण है। इनकी रचना द्वादश-यश, भक्ति-प्रताप आदि है। [८]

अष्टछाप कवि - श्रीकृष्ण के प्रिय अष्टसखा - संक्षिप्त परिचय

चित्र २: अष्टछाप कवि - श्रीकृष्ण के प्रिय अष्टसखा

अष्टछाप कवि श्री राधाकृष्ण की मध्यकालीन भक्ति परम्परा में अनूठे पद-सृजक, शास्त्रीय गायक एवं संगीतकार थे। अष्टछाप की स्थापना सन् १५६५ ईस्वी में गोसाईं विट्ठलनाथजी ने की थी, जिसमें पुष्टिमार्ग के प्रवर्तक महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य के चार शिष्य सर्वश्री कुम्भनदासजी, सूरदासजी, कृष्णदासजी एवं परमानन्ददासजी तथा गुसाईं विट्ठलनाथ जी के चार शिष्य - श्री गोविन्दस्वामीजी, श्री छीतस्वामीजी, श्री चतुर्भुजदासजी एवं श्री नन्ददासजी सम्मिलित रूप से अष्टयाम दिव्य भक्तिमण्डल के रूप में शामिल थे। इन अष्टछाप कीर्तनकारों को लोक में श्रीकृष्ण के द्वापरकालीन अष्टसखाओं के अवतार के रूप में भी पूजा जाता है। [९]

अष्टसखा श्री गोविन्दस्वामीजी का जन्म ब्रजभूमि के गाँव अटारी (आँतरी), जिला भरतपुर में हुआ था। स्वामीजी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व की अभिव्यक्ति एवं चिर-संरक्षण हेतु उनके जन्म-स्थान पर एक भव्य पैनोरमा निर्मित हो रहा है। अष्टछाप कवियों एवं श्रीकृष्ण की लीलाओं पर मौलिक अनुसंधान हेतु 'अण्टसखा गोविन्दस्वामी शोध संस्थान' निरंतर कार्यरत है. [११]

श्रीनाथजी के अष्टछाप (अष्टसखा) कवि हर अष्ट सखा के दो और लीला स्वरूप हैं, श्री ठाकुरजी के सखा और सखी के रूप में। जो हमेशा श्री गोवर्धन में श्रीजी के सेवा के लिए विराजते हैं। द्वापर युग के अवतार के समय श्री कृष्ण के आठ ग्वाल बाल सखा थे, जो अब अष्ट सखा के रूप में श्रीनाथजी की सेवा के लिए आए। यह अष्टसखा के अष्ट द्वार श्री गिरिराज जी में है। [१०]

अष्टछाप कृष्णकाव्य में लोकतत्त्व के प्रमुख अंश:

ब्रजभाषा और लोकधुन: अष्टछाप के कवियों ने ब्रजभाषा को लोक की भाषा बनाकर, उसमें आम आदमी की बोली और बोलचाल के मुहावरों का प्रयोग किया।

ग्रामीण जीवन का चित्रण: कृष्ण की लीलाओं को दर्शाते हुए, उन्होंने ग्वाल-बालों के साथ खेलना, माखन-चोरी, रासलीला जैसे ग्रामीण जीवन के प्रसंगों को जीवंत रूप से प्रस्तुत किया है।

भावनात्मक लोक-पक्ष: वात्सल्य (माता-पिता का प्रेम), सख्य (सखाओं का प्रेम) और माधुर्य (गोपियों का प्रेम) जैसे भावों को लोक के दृष्टिकोण से दर्शाया गया है, जो आम आदमी की भावनाओं से सीधे जुड़ते हैं।

त्योहारों और रीति-रिवाजों का वर्णन: होली, दीपावली और अन्य लोक-पर्वों का सजीव वर्णन उनके काव्य में मिलता है।

सामाजिक समन्वय: कृष्ण के चरित्र को एक लोकनायक के रूप में भी प्रस्तुत किया गया है, जो आम लोगों के जीवन और उनकी समस्याओं से जुड़ा है। [१२-१३]

निष्कर्ष:

इन सबका उद्देश्य कृष्ण भक्ति की स्थापना करना था। ये सभी कृष्ण भक्त कवि रस, आनंद और प्रेम की मूर्ति श्री कृष्ण और राधा-कण की लीलाओं के गान में लीन रहते थे। ये सभी दिन-रात ब्रज रस, कृष्ण रस और राधा रस का पान करते थे। "कान्ह चलत पग द्वै द्वै धरनी । अष्टछाप कृष्ण काव्य में लोकतत्त्व का अर्थ है कि कवियों ने कृष्ण की लीलाओं का चित्रण लोक-जीवन के संदर्भ में किया है। इन कवियों ने ब्रज के ग्रामीण परिवेश, लोक-गीतों और लोक-संस्कृति को अपनी कविताओं में पिरोया, जिससे कृष्ण भक्ति एक आम व्यक्ति के जीवन से जुड़ गई। उन्होंने कृष्ण को न केवल दैवीय रूप में, बल्कि एक लोक-नायक के रूप में भी प्रस्तुत किया, जो सामान्य जीवन के सुख-दुख से जुड़ा हुआ था।

संदर्भ:

१. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, नागरी प्रचारणी सभा, वाराणसी
२. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
३. हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास, नागरी प्रचारणी सभा, बनारस
४. हिन्दी साहित्य की भूमिका, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
५. अहमद इमत्याज, मध्यकालीन भारत एक सर्वेक्षण (८वीं - १८वीं शताब्दी) पृ. १४०
६. डा० नगेन्द्र हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ. २००
७. मध्यकालीन कृष्ण काव्य-कृष्णा देवी साड़ी, हिन्दी साहित्य सिंसार दिल्ली-६ प्रथम संस्करण पृ०
८. मध्यकालीन कृष्ण काव्य-डॉ. कृष्ण देव झाड़ी, हिन्दी साहित्य सिंसार दिल्ली-६, प्रथम संस्करण १९७०, पृ

९. ब्रजभाषा काव्य में माधुय भक्त-डॉ. रूपनारायण, नरवा युग प्रकाशन दिल्ली ७ प्रथम संस्करण पृ०
१०. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, डॉ. बच्चन सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, २००२, पृष्ठ १२८, आईएसबीएन ८१७११९७८५एक्स
११. हॉले, जॉन स्ट्रैटन (२०१५-०३-०९) । गानों का तूफान. हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस। आईएसबीएन ९७८०६७४४२५२८६.
१२. हिन्दी साहित्य का इतिहास, संपादक नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण १९७६, पृष्ठ २१७
१३. "अष्टछाप | हिंदी कवि" ब्रिटानिका का विश्वकोश। १८ जून, २००९. २०१८-०१-१ को पुनःप्राप्त